श्रीहरिः

श्रीपुष्पदन्तविरचित

शिवमहिम्नःस्तोत्र

सरल पद्यानुवादसहित

अनुवादक—

पाण्डेय रामनारायणदत्त शास्त्री

मुद्रक तथा प्रकाशक—मोतीलाल जालान, गीताप्रेस, गोरखपुर

सं०	२०१५ से २०३३	तक		२,४०,०००
सं०	२०३६	बारहवाँ	संस्करण	५०,०००
सं०	२०३८	तेरहवाँ	संस्करण	१,००,०००
			कुल	३,९०,०००

तीन लाख नब्बे हजार

मूल्य पंद्रह पैसे

पता—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

श्रीहरि:

श्रीपुष्पदन्तविरचित

शिवमहिम्नःस्तोत्र

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ॥ १ ॥

जानत न रावरी अनंत महिमा कौ अंत
याते अनुचित जो महेस ! गुन गाइबो,
हम तौ अग्यानी तो मैं ग्यानी ब्रह्म आदि हू की
बानी कौ लखात चूकि मूक बनि जाइबो।
मति अनुरूप रूप गुन के निरूपन मैं
होत जो न काहू पै कलंक अंक लाइबो,

दोस आसुतोस ! तौ न मानिये हमारौ आज
गुन गाइबे को यौं कमर कसि आइबो ॥ १ ॥

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥२॥

पथ सौं अतीत मन बानी के महत्त्व तव,
स्रुतिहू चकित नेति नेति जो बदति है,
कौन गुन गावै, है कितेक गुनवारो वह,
काकी उतै अलख अगोचर लौं गति है ।
भगत उधारन कौं धारन करौ जो रूप
विविध अनूप जाहि जोइ रही मति है,
काकौ मन वाकौं सदा ध्याइबो चहत नायँ
काकी गिरा नायँ गुन गाइबो चहति है ॥ २ ॥

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम् ।

मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथनबुद्धिर्व्यवसिता ॥ ३॥

मधु के बरस दिव्य सरस सुधा सौं सनी
बानी वेदमय निज मुख ते बखानी है,
तव मन रंजन निरंजन ! करैंगी कहा
देवगुरुहू की गुरुता सौं भरी बानी है।
प्रभु गुन गान कौ महान पुन्य पाइ आज
पावन बनैगी गिरा मेरी यह जानी है,
गुन अवगाहिबे की महिमा सराहिबे की
याही ते पुरारि जू ! सुमति उर आनी है ॥ ३ ॥

तवैश्वर्यं यत् तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्
त्रयीवस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु ।
अभव्यानामस्मिन् वरद रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः ॥ ४ ॥

विदित विभूति भूतनाथ तव संसृति कौ
सृजन भरन तैसें हरन करति है,

वेद ते भनित गुन भेद ते विभिन्न बपु
तीनि देव—विधि हरि हर मैं लसति है।
ताहू की महत्ता और सत्ता खंडिबे के हेतु
निंदा जगती मैं करैं केते जडमति हैं,
प्रीति होति जा मैं नाहिं पंडित प्रबीनन की,
मंगल बिहीनन की होति वा मैं रति है ॥ ४ ॥

किमीहः किं कायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च ।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः ॥५॥

कैसी करै ईहा, कैसी मन मैं समीहा करै,
कैसौ वाको तन, कैसौ करत जतन है,
कौन ठाँयँ बैठि कै बिधाता तीन लोकन कौ
कौन उपादान लैकैं सारत सृजन है।
कुतरक ऐसे रख मूरख लरत केते
मोह मैं परत ओह ! जन गन मन है,

वैभव अतर्क्य नाथ ! साथ सब सक्ति, कहाँ
रावरे मैं बावरे तरक कौ सरन है ॥ ५ ॥

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता-
मधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति ।
अनीशो वा कुर्याद् भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे ॥ ६ ॥

अमित अनूप रूप रंग अंग वारे, तऊ
एते सब लोक क्यौं रे जन्म न धरत हैं,
कै धौं या प्रपंच कौ न सिरजनहार कोऊ
बिन करतार सृष्टि कारज सरत है ?
सिरजनहार जोपै ईस छाँड़ि आन कोऊ,
तोऊ कौन साधन लै सृजन करत है।
[illegible] कहा जो देव ! बारन तिहारौ करि
बार बार संसय मैं मूरख परत हैं ॥ ६ ॥

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च ।

रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥ ७ ॥

तीन वेद, सांख्य, जोग सैव बैष्नवादि मत
भिन्न भिन्न मारग अनेक कहियतु है,
योई बड़ौ, वोई बड़ौ, यासौं लाभ, वासौं लाभ,
सब रुचि भेद सों सराहि चहियतु है।
केते गहैं सूधे, केते मारग असूधे गहैं,
अंत सबही कौ एक आप लहियतु हैं,
सरित प्रवाह बहै सूधी कै असूधी राह,
सतत अथाह सिंधु ही तौ गहियतु है॥ ७ ॥

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तववरदतन्त्रोपकरणम् ।
सुरास्तां तामृद्धिं दधति च भवद्भ्रूप्रणिहितां
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥ ८ ॥

रूढ़ौ बूढ़ौ बैल, पायौ खाटकौ, कुठार, चाम,
भस्म, ब्याल, कर मैं कपाल छबि पावै हैं,

बरद ! तिहारे ढिग कुल के भरन हित
एतेक बरन उपकरन लखावै है ।
तौहू तव भृकुटि बिलासही ते देव सबै
पास रिद्धि सिद्धि कौ सुपास सदा पावै हैं,
आतम सरूप मैं जो मन कौ रमावै सदा,
बिषय मरीचिका न ताहि भरमावै है ॥ ८ ॥

ध्रुवं कश्चित् सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये ।
समस्तेऽप्येतस्मिन् पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥ ९ ॥

कोऊ कहै सारो यह जगकौ पसारो नित्य,
कोऊ बिस्व अखिल अनित्य बतरावै है,
कोऊ या सकल जग बीच भनै दोऊ भाव,
नित्य औ अनित्य या मैं पृथक लखावै है ।
सुनि गुनि बात एती चित्त है चकित होत,
या ते गुन गावत न दास ये लजावै है,

बोलिबे को आदी हौं, सुभाव बकबादीपन,
सोई त्रिपुरारि ! आज लाज बिसरावै है ॥ ९ ॥

तवैश्वर्यं यत्नाद् यदुपरि विरञ्चिर्हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः ।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरु गृणद्भ्यां गिरिश यत्
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ॥१०॥

तेज पुंजमय तव प्रकट हुतौ जो रूप
वाकी महिमा की थाह पाइबे जतन सौं,
नीचे गयौ हरि विधि ऊरध गमन कीन्हौं
पार नहीं पायौ, भयौ अपार स्रम तन सौं ।
हारि थकि रावरे करन गुन गान लागे
स्रद्धा सौं गिरीस भूरि भक्ति भरे मन सौं,
खाय कैं तरस दियौ आप ही दरस आप,
आवत न हाथ कहा नाथ के भजन सौं ॥१०॥

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद् बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान् ।

शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् ॥११॥

कंटक बिहीन तीन लोक कौ अखंड राज
पायौ जो अधीन बिन जतन पसारे पै,
धारीं जो सुदृढ़ दससीस ईस बीस भुजा
जुद्ध काज खाज जाकी जाय ना निबारेपै ।
सोऊ लखि परत पुरारी ! एक रावरेई
भारी भक्ति भावको प्रभाव निरधारे पै,
करि उपहार धरयो कमल समान निज
मस्तक अमल पद कमल तिहारे पै ॥११॥

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं
बलात् कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः ।
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः॥१२॥

रावरौ भजन सब काल दसभाल करि
पायौ जो बिसाल बाहु बिपिन सबल है,

खरेई बास कयलास के उठायबे मैं
ताहि कौं लगायौ, प्रगटायौ निज बल है।
त्यौं ही आप नैसुक अँगूठा कौ हिलायौ सिरौ
नीचे लख्यौ नीच ना पतालहू में थल है।
साँची यह बात, रिद्धि सिद्धि अधिकात लखि
फूल्यौ ना समात, मोहि जात सदा खल है ॥१२॥

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः।
न तच्चित्रं सम्यग्वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥१३॥

ऊँची सुरपति की समूची जो समृद्धि ताहि
नीची करि राखी रिद्धि सिद्धि अधिकाए ते,
परिजन सरिस प्रजा कौं तीन लोकनकी
कीन्हीं जो अधीन बलिसुत बल पाए ते।
एहो बरदानी ! वा मैं बात है विचित्र कहा,
रावरे चरन के भजन मन लाये ते,

बढ़त न को है, ऊँचे चढ़त न सोहै कौन
सासुहै तिहारे नाथ ! माथके नवाये ते ॥१३॥

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्यासीद् यस्त्रिनयनविषं संहृतवतः ।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः ॥१४॥

अंत ब्रह्माण्ड कौ अकाण्ड में ई ह्वै है हंत
सोचत ससंक यौं सुरासुर कौ गन है,
पेखि ह्वै अधीन करुना के तीनलोचन जू
पान करि कीन्हौं विष संकट समन है ।
याते नीलकंठ ! नील कंठ जो तिहारे अंक
सोहत सदाई बनि कंठ अभरन है,
वाको है विकारहूँ सराहिबे के जोग जाकौ
भव भय भारन बिदारन ब्यसन है ॥१४॥

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः ।

स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्
स्मरः स्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः ॥१५॥

देवन दनुज मैं, मनुज हू मैं जग बीच
जाके पंच सायक न रंच कबौं हारे हैं,
साधे बिनु काज पग आधेहू मुरत नायँ,
तुरत अधीन तीनौं लोक करि डारे हैं।
सोऊ ईस ! मानि आन देव के समान तोहि
काम नाम सेस है अनंग गति धारे है,
बस करि राखै जो अतंद्र मन इंद्रिन कौं
तिन अपमान मान हितहू बिगारै है ॥१५॥

मही पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता ॥१६॥

तांडव अकांड मैं धमक पाय पाँयन की
डगमग धाम है धरा कौ धसकत है,

घूमत परिघ सी भुजान के अघात लागें
गात ग्रह गन के गगन कसकत हैं।
छूटे जटाजूटन के झोकन ते बार बार
ताड़ित द्युलोक ओक हूँ ते खसकत है,
एते पै कहत जग राखिबे को नाचौ आप,
साँचौई प्रभुत्व बाम ह्वै कै बिलसत है ॥१६॥

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद् द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ॥१७॥

जाते प्रगटत पय फेन को प्रकास दिव्य
धारा मैं मिलित तारागन सौं गुनित होत,
जाते सिंधु संवृत अखंड महीमंडलहू
द्वीपरूप ह्वै कै हलखात औ भनित होत।
सोई व्योमव्यापी बारिबृंद को प्रबाह नाथ !
माथ पै तिहारे लघु बिंदु ज्यौं लसित होत,

याही ते महेश जू ! अनूप रूप रावरे की
दिब्यता महत्ता जानी जात अनुमित होत ॥१७॥

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति ।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि-
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥१८॥

रथ वसुधा कौ, चाकौ सूर औ सुधाकर कौं
सारथि कौ पद पदमासन कौं दीन्हौं है,
आपही रथी है चाप लीन्हो मेरु मंदर को
अनुज पुरंदर कौ बानरूप कीन्हौं है।
तृन से त्रिपुरकौं जराइबेके काज कैसौ
साज यों अडंबर कौ साज साथ लीन्हौं है,
खेलति बिधेयन सौं मति परमेसर की
परम स्वतंत्र है, न काहूँ बस कीन्हौ है ॥१८॥

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन् निजमुदहरन्नेत्रकमलम् ।

गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम् ॥१९॥

सहस सरोजन उपायन लै रोज रोज
पाँयन मैं रावरे चढ़ायो हरि नेम सौं,
ऊन लखि एक एक दिन दुख दूनौ मानि
निज नैन कंजहू निकासि धर्यौ प्रेम सौं,
वा ई भक्ति भूरि फरी कर में सुदर्सन ह्वै,
दीपै जो समीपै सदा श्रीपति के हेम सौं,
सोक हरिबे कौं, भरिबे कौं तीन लोकन कौं
सोई त्रिपुरारि चक्र जागै सदा छेम सौं ॥१९॥

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते ।
अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं
श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा कृतपरिकरःकर्मसु जनः ॥२०॥

सोवैं जग्य दान, तऊ आप जजमानन कौं
नित फल देन काज जागत रहत हैं,

साधन कहाँ है छोड़ पुरुष अराधन कों
बीते कर्महू को फल जाते प्रगटत है।
देखत सबैई फल दीबे हेतु जग्यन मैं
स्वामी समरथ आप जामिन बनत हैं,
यातें धरि आस बिस्वास बेदबादन पै
कर्म करिबे मैं लोग चाव सौं लगत हैं ॥२०॥

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रेषस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥२१॥

जजमान दच्छ हैं क्रिया में अति दच्छ जहाँ,
अखिल अधीस जिन्हैं जानैं प्रजाजन हैं;
एहो सरनागत कौ पालन करनहार!
ऋषिबृंद ऋत्विज, सदस्य सुरगन हैं।
हाथ सों तिहारे नाथ जग्य कौ बिनास तहाँ,
जाहि जग्य फलके बिधान को व्यसन है,

साँची यह बात होति हानि जजमान ही की,
जानि जो करत बिन श्रद्धा कौ जजन है ॥२१॥

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः॥२२॥

बस मैं अनंग के ह्वै निज तनुजा के संग
धायो बिधि करन प्रसंग बरजोरी सौं,
ताहीं घरी लाज सौं गरी सी हरिनी ह्वै भगी,
ह्वै कै प्रजानाथहू हरिन चल्यौ चोरी सौं।
पेखि यह पाप आप चाप कौं चढ़ायौ, छूटि
बेध्यौ मृग ब्याध ज्यौं सपंख सर, डोरी सौं,
नाकहूँ गए पै डरि ना कहूँ तजै है अबौं,
बान सो पिनाकपानि जू कौ खरौ खोरी सौं ॥२२॥*

---

* यहाँ उषा और सूर्यदेवके प्रातःकालिक संयोगका रुचिर रूपके द्वारा वर्णन किया गया है।

स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमह्नाय तृणवत्
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि ।
यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत देहार्धघटना-
दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः ॥२३॥

अपनी लुनाई के भरोसे गिरिजा ने लख्यौ
चाप गहें दाप सौं कुसुम धनु वारौ है,
संजम निरत सुरभंजन ! भय। सौ तहाँ
सामुहैं तिनूका सौ तुरत जरि छारौ है ।
ताहू पै तिहारे तन आधे मैं निवास पाय
दास तिय कौ जो तुम्हैं करति बिचारो है,
चारौ कहा, बरद ! बिचारौ एती गूढ़ बात
मूढ़ जुवतीन की जमात निरधारौ है ॥२३॥

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः ।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मङ्गलमसि ॥२४॥

भेष अड़बंग लै अनंग अंगहारी आप
नाचत मसान मैं पिसाच सहचारी हैं,
भासत चिता कौ लग्यौ भसम निराला तन
माला नरमुंडन के झुंडन की भारी है।
मिलित अमंगल सौं सील यौं लखायौ करै,
भायौ करै विपरीत रीति त्यौं तिहारी है,
तौहू जे तिहारे पद सुमिरनहारे तिन्हैं
बरद ! सहारे आप अति सुभकारी हैं ॥२४॥

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः।
यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत् किल भवान् ॥२५॥

अंतरमुखी कै मन, थापि चित्त चेतना मैं
सब बिधिही सौं प्रानायाम मैं निरत हैं,

जोगी अवदात जाहि देखि पुलकित गात
आनँद सलिल स्रोत नैन ते झरत हैं।
जाको ध्याइ भरत उमंग भूरि मानस मैं
सर मैं सुधा के मनो मज्जन करत हैं,
आप ही सो अकथ अनूप रूप बस्तु, जाहि
अंतर मैं संजमी निरन्तर धरत हैं ॥२५॥

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योमत्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च।
परिच्छन्नामेवं त्वयि परणता बिभ्रतु गिरं
न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥२६॥

आप ही प्रभाकर, त्यौं आकर कलाके आप,
आप ही अनिल, तैसे आप ही अनल हैं,
आसमान है कै आप ही तौ भासमान होत,
आतमाहू आप आप भूमि और जल हैं,
या बिधि असीमहू कौ सीमित बतायौ करैं
मनुज प्रबीन पीन मति के सकल मैं,

हम तौ न जानैं, या अखिल जड़ चेतन मैं,
ऐसौ कौन तत्त्व, जो न आप अविकल हैं ॥२६॥

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-
नकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत् तीर्णविकृति ।
तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः
समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम् ॥२७॥

तीनहू अवस्था, तीन वेद की बिवस्था कहै,
तीनहू भुवन, तीन देवन लखावै है;
बरन अकार सौं उकार सौं मकारहू सौं
रावरेई रूप के प्रकार बतरावै है ।
तिन ते परे जो हीनविकृत तुरीय धाम
ताकौं अर्धमात्र सूक्ष्म ध्वनि सौं जतावै है;
एक है कै एक, त्यों अनेक है अनेकरूप
सरनद ! आप कौं प्रनवपद गावै है ॥२७॥

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहां-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम् ।

अमुष्मिन् प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि
प्रियायास्मै धाम्ने प्रविहितनमस्योऽस्मि भवते ॥२८॥

भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, महादेव, उग्र,
भीम औ ईसान---ये जो आठ दिव्य नाम हैं,
एहो देव ! बेद इन मैं ते एक एकहू कौं
बोलिबे के हेतु बरनत आठो जाम हैं।
प्रानहू ते प्यारे मेरे परम अधार आप
आप कौ सरूप दिब्य ललित ललाम है;
याते हम भक्ति अनुरक्ति भरे अंतर मैं
आप कौं निरंतर ही करत प्रनाम हैं ॥२८॥

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति सर्वाय च नमः ॥२९॥

एहो बन वीथिन मैं बिहरन वारे ! अति
निकट हमारे भगवान कौं प्रनाम है;

अति दूरवारे कौं प्रनाम मदनारे ! त्यौंही
लघुतर परम महान कौं प्रनाम है।
तीन नैनवारे प्रभो ! अतिवय बूढ़हू कौं
नव वय रूढ़ त्यों जवान कौं प्रनाम है;
सब मैं तुम्हीं हौ, सब रूप मैं तुम्हीं हौ देव !
'यह', 'वह' सकल जहान कौं प्रनाम है ॥२९॥

बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः।
जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥३०॥

बिस्व बिरचैबे कौ रजोगुन अधिक जाको
भव के प्रभव भवरूप को नमन है;
तम के बढ़े पै जान समय संहारहू को
हर है हरत, हर रूप कौं नमन है।
सुद्ध सत्व बृद्धि कौ सुजोग पाय लोगन कौं
सुख दैनवारे मृडरूप कौं नमन है;

त्रिगुन रहित हित परम प्रकासमय
पद मैं लसित सिवरूप कौं नमन है ॥३०॥

कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः।
इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद्
वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥३१॥

मेरौ यह चित्त कहाँ चेरौ है कलेसन कौ
सुध बुध कल्प अल्प अति पायौ है,
सीमा हीन रावरी सनातन समृद्धि कहाँ
लाँघि गुन सीमाके परेई दरसायौ है।
याते लखि चकित जकित मोहि भक्ति तव
वरद ! बलात गुन गान मैं लगायौ है,
रुचि अनुसार यह बचन सुमन हार
रावरे चरन उपहार लै चढ़ायौ है ॥३१॥

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।

लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥३२॥

कारे गिरिराज तुल्य काजर कौं घोरि घोरि
स्याही करि राखै, महासिंधु मसिदानी है,
भाषा लिखिबे को साखा सुरतरु लेखनी है,
कागद की कूरी त्योंही पूरी बसुधानी है।
लै कै सब साधन अराधन मैं लीन सदा
लिखति महेस गुन गन की कहानी है।
हारै थकि हाथ, गुन गाथ कौं तिहारे नाथ !
तदपि न पावै पार सारदा सयानी है ॥३२॥

असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौले-
र्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ।
सकलगणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार ॥३३॥

पूजत जिनहि सुर असुर मुनींद्र बृंद,
भाल जिनकेई बाल इंदु छबि पायौ है

गुन ते रहित हितरूप वे महेश, जिन
गुन महिमा कौं इतै बरनि सुनायौ है।
खास उनकेई दास गन मैं महान एक,
नामवंत है जो पुष्पदन्त कहलायो है;
वानेई अलघु मृदु छंद बंद बारो यह
वंदन के काज अभिनंदन बनायो है ॥३३॥

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान् यः।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथात्र
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान् कीर्तिमांश्च ॥३४॥

मानस मैं भारी भूरि भक्ति अनुरक्ति भरे
नित्त जो मनुज शुद्धचित्त है रहत है,
स्तवन बिसेस या महेस महिमा कौ मंजु
रोज रोज बदन सरोज सौं कहत है।
तजि सो असिव लोक सजि सिवलोक जाय,
सिव भगवान् की समानता गहत है,

त्यौंही इतै संपदा अनंत, आयु दीरघ लै
सुतहू की रति औ सुकीरति लहत है ॥३४॥

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः ।
अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥३५॥

देव न दूजौ महेस्वर के सिवा,
है जो कहीं तौ समत्व न कोई;
त्यौं ही समीप महिम्न के हैं स्तुति
और की राखै महत्त्व न कोई ।
मंत्र अघोर ते और बड़ो नहीं,
औरन कौ इतै सत्त्व न कोई,
श्रीगुरु ही त्यौं महान जहान मैं,
है गुरु सौं बड़ौ तत्त्व न कोई ॥३५॥

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः ।
महिम्नः स्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥३६॥

दीक्षा, दान, सुतीर्थ, तप,
जग्य आदि कृति ग्यान ।

तत्त्व न जानौं ईस तव, कस तुम महिमा धाम ।
महादेव जाविध जहाँ ताविध तुम्हैं प्रनाम ॥४१॥

एककालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेन्नरः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥४२॥

एक, दोय, तीनों समय पढ़त जो नर अभिराम ।
सब पापन ते मुक्त सो बसत, सदा सिवधाम ॥४२॥

श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण ।
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥४३॥

पुष्पदंत मुख कंज ते प्रगट्यौ स्तोत्र उदार ।
रासि रासि अघ हरत है, हर कौ परम पियार ॥
कंठ किएँ याके पढ़ें, करिबे ते नित ध्यान ।
होत प्रसन्न महेस चर भूतनाथ भगवान ॥४३॥

॥ शिवमहिम्नःस्तोत्र सम्पूर्ण ॥